

आज की भागदौड़ से भरी ज़िंदगी में संगीत, कला और साहित्य सुखद अनुभूति प्रदान करते हैं। साहित्य की एक ऐसी ही कलात्मक विधा है-कविता। हमें प्रसन्नता है कि हमारे रेल परिवार में अनेक अधिकारी एवं कर्मचारी अपनी

जहाँ न पहुँचे नहीं, वहाँ पहुँचे कवि

काव्यात्मक अभिव्यक्ति के इन पृष्ठों पर हम ऐसे ही कुछ रेल एवं अतिथि कवियों की काव्य रचनाओं को प्रकाशित कर रहे हैं।

प्रधान सम्पादक

गाड़ी और रेलगाड़ी

चलती जो सड़क पर वो है गाड़ी
चलती जो ट्रैक पर वो रेलगाड़ी
औरतों को जो भाए वो है साड़ी
मर्द हमेशा जुझता बनाने में अपनी बाँड़ी
रेल है जैसे लम्बी साड़ी
गाड़ी है जिसे हर कोई दिखाता कहकर
कैसी है इसकी बाँड़ी?
सड़क पर चलती गाड़ियों को मिलती सड़कें चौड़ी
रेलगाड़ी चलती ट्रैक पर,
जो होती सीमित और सीधी-आड़ी
कोई गुम नहीं जो गाड़ी हो जाए लेट
रेलगाड़ी के होने से लेट, सब हो जाते लमलेट
गाड़ी चलता इंसान जो होता सेट
रेलगाड़ी चले सभी वर्गों के लिए
और भरे कई कर्मचारियों का पेट
गाड़ी में है लेप टॉप पर नेट
रेलगाड़ी में भी भड़या अब पाते हैं चार्जिंग और नेट
फर्क सिर्फ इतना, गाड़ी के नेट के देने पड़ते है दाम
रेलगाड़ी के नेट/चार्जिंग के पैसे बचाकर
आप खा सकते हैं कीमती आम
रेलगाड़ी इतनी सस्ती
हर यात्री की आज भी आम पर नज़र टिकती
तो बोली महान कौन, गाड़ी या रेलगाड़ी
किसी को लगे गाड़ी डॉन,
तो किसी को लगे रेलगाड़ी डॉन
मगर एक बात है पक्की दोस्तों
बीच में अगर आए कोई,
दोनों ही बजाते हैं जोरदार हॉर्न।

रवि कपूर,

रिजनल मैनेजर, प्रभात एडवर्टाइजिंग, मुंबई

ये श्रम देवता

कंडेकड़ती ठंड में, सुबह-सुबह
रेल की पटरों के किनारे-किनारे, जंगल में
पुराने कपड़ों और डंडों का अस्थायी 'घर'
बनाकर रहते थे, मजदूर! और उनका परिवार
मेरी, और अन्य यात्रियों की ओर देख रहे थे।
हमारी टेन किसी कारणवश वहाँ खड़ी हो गई थी।
वे न सिर्फ हमें देख रहे थे
बल्कि हमें देखकर मुस्करा भी रहे थे।
वो मुस्कराहट, जो 'इंचो' में नहीं होती,
हाव हिला रहे थे।
चौधड़ी में लिपटे उनके बच्चे भी!
हमें देखकर!
हम उस टेन के वीआईपी मुसाफिर
वातानुकूलित कोच में।
जो यह सब देखकर भी
अपनी प्रतिक्रिया देना शान के खिलाफ समझते हैं।
तभी उनमें से एक ने पास के
बबूल की एक डाली तोड़ी
और उसके काँटे साफ करने लगा।
शायद, दंत मंजन के लिए।
सच है, सुबह दंत साफ करने और
दिन भर पटरों साफ, सुरक्षित करने के लिए
ये श्रम देवता काटि ही तो हटाते हैं,
दूसरों की राह के काँटे हटाना ही तो
सबसे साहस का काम है
जो कि बीर सैनिकों के बाद
ये श्रम देवता ही कर सकते हैं,
दिन-भर लोहे और पथरों से जूझकर।

संतोष सुपकार, लोको पायलट, पश्चिम रेलवे, उज्जैन

सोना

सोना है सूर्य का अंग, उन्हीं के जैसा है, तेजवान।
सूर्य के अँसुओं से निकला, है यही इसकी पहचान।।
ये पवित्र है, सृष्टि है, कालजयी है, अजर-अमर।
सभी का है ये प्रिय, वेदों में है इसका बखान।।
जिस घर में है सोना, वहाँ लक्ष्मी का है वास।
मनुकाल से चला आ रहा, आगे भी रहेगा गतिमान।।
धरती में, समुद्र में, खानों में, रेगिस्तानों में।
हर युग में इसे, तलाश करता रहा इन्सान।।
ये जीवन का है हिस्सा, सुख-दुख का है साथी।
चंचल है, चमकीला है, सोना है चलायमान।।
भविष्य की सुरक्षा व सौंदर्य का है ये प्रतीक।
संकट के समय यही हमें बनाता है बलवान।।
गज़ब की कशिश है इसकी सुनहरी आभा में।
धातुओं में सबसे अधिक, सोना ही है मूल्यवान।।
अधुरा है इसके बिना, स्त्रियों का शृंगार।
यही बढ़ाता है उनके सौंदर्य का प्रतिमान।।
जान से ज्यादा स्त्रियों का है ये प्रिय।
इसमें ही शोभा पाता है, उनका शृंगार दान।।
सोने से जब स्त्री करती है अपना सिंगार।
हर पुष्प को होता है, अपनी स्त्री पर अभिमान।
सुख, समृद्धि व परम्परा का अदृट हिस्सा है ये।
भारतीय जन-जीवन में सोने का है, अहम स्थान।।
सुनहरे नशे में आज, झुप रही है ये दुनिया।
पौले उजाले की ही सब करते हैं गुणगान।।
आलस्य व कामचोरों से रहता है सदा दूर।
जहाँ है सोना ही सोना, वहाँ नहीं इसका निशान।।
सोना सर चढ़ कर न बोले इतना रखना ध्यान।।
पाकर इसे कभी भी 'नीरू' मत करना अभिमान।।

निर्जन लाल 'नीरू',
सहायक चित्त सलाहकार (भिरिदाग), वर्धगिट

अनुभूति

ऐसा भी होता है कभी कभी अर्द्ध में,
चेहरा अपना ही देखकर डर जाता हूँ मैं,
भावों से, अभावों से, भूलियों से विभूतियों से,
पल-पल सिहर-सिहर जाता हूँ मैं।
करता हूँ सवाल अपने से और अपनों से,
ऐसा क्यों हो रहा है? जबवा देता है अलंमन मेरा,
मानव आज का अपनी ही नज़रो में गिर रहा है,
मानव-सम्मान और मर्यादा विहीन हो रहा है,
ये मूल्य पल-पल छिन-छिन खो रहा है,
इसीलिये ऐसा हो रहा है।
अपनी ही आवाज़ों की चिन्ता में झुलस जाता हूँ मैं,
मरु के थार में अपने को जब-जब अकेला पाता हूँ मैं।
देख रहा हूँ, विडड़ रहा हूँ, अपनों से और सपनों से,

आशाओं की चिन्ता पर चलकर नहीं सम्भल पाता हूँ मैं।
विपदाओं का झंझावात नहीं समझ पाता हूँ मैं,
काली-काली कल्पनाओं में अटक सिहर जाता हूँ मैं।
जिन रास्तों पर काँटे अक्सर उभर चला जाता हूँ मैं,
काँटों से बचने में ही तो, नहीं सँबर पाता हूँ मैं।
सुरमयी आँखों में बसा लो हर्षी सपने,
खुली आँखों से बना लो उन्हें अपने,
हासिल हो अंजाम फर्ज़ पर फरज़ करो,
खुदा भी पूछगा कहीं है, क्या हैं तुम्हारे सपने?
फूलों से नहीं कहते, फूलों को चमन के लिये,
बन्दूकों से नहीं कहते, गारजें वे अमन के लिये

आप लोगों से गुज़ारिश है दोस्तों,
कुछ समय खुद के लिये निकालो
कुछ निकालो वतन के लिये।
सदियों से सच सो रहा है और अभी भी सोया है,
सच की सच्ची सार्वकता हो, ये प्रयास संजोया है।
झूठ की चार दीवारी में सच,
सिसक-सिसक कर रोया है।
सच का हुआ सामना जैसे झूठ बोल नहीं पाया
सच के आगे झूठ हमेशा ही घबराया।
पतित पावन भावन जिसकी सच से वो न दूर रहे,
मोका परस्ती, झूठ, फरेब के आगे नहीं दूर पाया।

प्रह्लादयाल,

वरिष्ठ सहायक चित्त सलाहकार, पश्चिम रेलवे, वर्धगिट

चुनाव

देखो-देखो चुनाव आ रहा,
लोकतंत्र का महापर्व आ रहा,
चूँ दशाओं से लाउड-स्पीकरों की आवाज आ रही,
वायदों और कसमों की झड़ी लग रही।
देखो-देखो चुनाव आ रहा,
लोकतंत्र का महापर्व आ रहा।
पर हम मतदाताओं को सोच,
समझकर करना है मतदान,
जो नेताओं के लिए है मानो अभयदान,
अब अगले पाँच सालों तक वे हम पर करेंगे राज,
जिसमें न होगा कोई काम और न कोई काज।
देखो-देखो चुनाव आ रहा,
लोकतंत्र का महापर्व आ रहा।
इसलिए मतदाताओं वायदों पर मत जाना,
बरना पड़ेगा आपको पछताना,
चुनाव के बाद भी मिलेंगे आपको ऐसे नेता,
और न ही मिलेंगे इनके आदरणीय कर्त्ता-धर्त्ता,
पूरी तादाद में सोच-विचार कर करें अपना मतदान,
तभी आपके के साथ देश का भी हो सकेगा कल्याण,
देखो-देखो चुनाव आ रहा,
लोकतंत्र का महापर्व आ रहा।

राकेश कुमार सुमन, गोपनीय सहायक,
स्थापना शाखा, परिवर्तन रस्ते प्रधान कार्यालय वरुण

काम काज में हिंदी जोड़

हम हिंदी हैं, बस हिंदी बोल,
लिख-पढ़ने में सब भाषा छोड़,
अंग्रेजी से रिश्ता कैसा? हिंदी से तू नाता जोड़,
काम-काज में हिंदी जोड़, काम-काज में हिंदी जोड़।
अंग्रेजी परदेसी है, हिंदी हिंदुस्तानी है,
राष्ट्र-प्रेम का सन्तुष्ट दे कर,
हिंदी से तू नाता जोड़, काम-काज में हिंदी जोड़।
बहुत हुआ 'रिसीट-डिस्पेंच'
अब तो बोलो 'प्राप्त और प्रेषण'
'परिचालन' हो न कि 'सर्वयुलेशन'
हिंदी से तू नाता जोड़, काम-काज में हिंदी जोड़।
अंग्रेजी पर गर्व न कर, ऊँचा न होता इससे सर,
अंग्रेजी का फैशन तोड़,
हिंदी से तू नाता जोड़, काम-काज में हिंदी जोड़।
पंजाबी, गुजराती, मराठी, सब अच्छी हैं अपने घर में,
मैं से सबका मनका पोड़,
हिंदी से तू नाता जोड़, काम-काज में हिंदी जोड़।
अंग्रेजों ने जब राज किया, अंग्रेजी को पास किया,
हम ने हिंदी भाषा के संग, सीतेलामन रास किया,
इसीलिए सब भैया-बहना, मान भी जाओ मेरा कहना
भारत-वर्ष के हर कोने में, हिंदी से तू नाता जोड़।

जे.के.शेख,
वरिष्ठ लिपिक, यांत्रिक विभाग, वरुण

WDS, मेरी जान है !

डीज़ल लोको शेंड बान्ना की अपनी अलग पहचान है,
जहाँ पर बनता अपना WDS, महान है।
WDS, ने हम सबको दे रखा रोजी-रोटी व काम है,
इसलिए तो हमने रखा इसका 'गणपति' महाराज नाम है।
देखने में छोटा-सा, पर ये बिल्कुल नौजवान है,
करता है काम खूब जम के, ये ताकत की खान है।
हम सब प्यार से इसे बुलाते कह कर के 'पप्पू'
ट्रैक पर चलता मस्ती से ये चला-चला के चप्पू।
6 सिलेण्डर 4 स्ट्रोक का है ये WDS,
चलता है ये मस्त चाल से करता नहीं किसी को बोर।
2700 लीटर ईंधन, इसकी यही खुराक है,
530 लीटर पानी पीने की इसकी खूब धाक है।
पैसे-जर, एक्सप्रेस हो या गुड्स ट्रेन,
शॉर्टिंग करता है यह लगा के ड्रेन।
आपातकाल के समय बस आता यही काम है,
इसलिए तो अपना WDS, महान है।
डॉक्टर डीज़ल मैकेनिक से रिश्ता इसका खास है,
स्वास्थ्य की जाँच कराने आता इन्हीं के पास है।
डीज़ल लोको शेंड बान्ना की बड़ती इससे शान है।
कहे कवि 'भारद्वाज' WDS, हम सब की जान है।

रामाश्रय माझाज
डीज़ल मैकेनिक-III, डीज़ल लोको शेंड, बान्ना

मैं जब भी अपनी

बीती जिंदगी में झाँकता हूँ,
सुनहरे बचपन के पलों को देखता हूँ,
अपने गाँव की मिट्टी की महक
और खेतों की खुशबू महसूस करता हूँ,
अपने सुन्दर घर
और कुएँ के मोटे पानी को देखता हूँ,
मैं जब भी अपनी
बीती जिंदगी में झाँकता हूँ,
अपने दादा और दादी जी की
यादों को संजोता हूँ, अपने घर के आँगन,
बराभरे की चहल-पहल महसूस करता हूँ,
अपने खेतों, खलिहानों, गाँवों की गलियों
और हरे मैदानों को देखता हूँ,
साबन के झूलों, सुन्दर बगीचों
और हरे पेड़ों की लहलहाते देखता हूँ,
वह साबन की बौझर
बारिश की टिपटिपाहट
और इन्धनघुष के सात रंगों को देखता हूँ,
मैं जब भी अपनी

मैं जब भी अपनी बीती जिंदगी में झाँकता हूँ !

बीती जिंदगी में झाँकता हूँ,
अपने स्कूल और कंधे पर
लगे बस्ते को देखता हूँ,
वह मास्टर जी का डौटना
और उनका विश्वास देखता हूँ,
अपने स्कूल की किताबों
और दोस्तों संग मस्ती देखता हूँ,
वह स्कूल की सड़क
और सड़क किनारे तालाब को देखता हूँ,
वह दोस्तों संग घर आना,
बाज़ार में चाट खाना
और खुद को साइकिल
चलाते देखता हूँ
मैं जब भी अपनी
बीती जिंदगी में झाँकता हूँ,
गाँवों के घरों में दीवाली के दीये,
मैदानों में पटाखों की गुंज
मिठाइयों तथा खुशियों की
बौझर देखता हूँ,

सर्दी की ठंड में सहराती हवाओं
और खेतों में पीले फूल देखता हूँ,
वे गन्ने से लदे खेत
और टयूबवैल से निकलता
निर्मल पानी देखता हूँ,
सर्द रातों में माँ के हाथ से बने पकवान,
पिताजी के सहरने, दादी माँ के चुटकुले
और भाई-बहन का
निराला प्यार देखता हूँ
मैं जब भी अपनी
बीती जिंदगी में झाँकता हूँ
संक्राति में नीले-नीले आकाशों में
रंग-बिरंगी पतंगों को
पेंच लड़ाते देखता हूँ,
गाँव के मेलों की भीड़ में खो जाता हूँ,
वह पिताजी के कन्धों पर
बैठकर मेला देखना
और सोझ में खेतों में बनी पगडंडी पर
उनका हाथ पकड़कर

घर आता देखता हूँ,
उन नये-नये कपड़ों
और घर की खुशियों को देखता हूँ,
मैं जब भी अपनी बीती
जिंदगी में झाँकता हूँ
अपने दोस्तों के प्यार में खो जाता हूँ
वह होली में गुलाल से रंगे हुए चेहरे
और रंग-बिरंगे पानी से भीगे हुए
शरीर को देखता हूँ
घरों में गुझिया बनने की
खुशबू महसूस करता हूँ,
उन गर्मी की छावों,
और सुबह की पीली-पीली धूप के साथ
कोयल की मधुर पुकार सुनता हूँ
मैं जब भी अपनी बीती
जिंदगी में झाँकता हूँ
अपने सुनहरे बचपन के
पलों को देखता हूँ।

मनोज एस. हुवे,

सहायक प्रबंधक, साई एवर्टाइजर्स मुंबई

रावण दहन

चिह्न जला दिया जिन्ना जिंदा रहा,
अपनी करतूतों पर खुद ही शर्माया रहा,
धुप्र वीज बन गया है रावण,
क्योंकि भरे अंदर भी एक दरिद्रा रहा।
प्रतीक को जला दिया बहुत अच्छा किया,
बच्चों को समझा दिया बहुत अच्छा किया,
पर क्या तुम्हें ठीक-ठीक याद है?
सच बताओ तो कितनों को गच्चा दिया?
हरण सीता का रावण का प्रतिशोध था,
भगिनी की बेइज्जती का क्रोध था,
अशोक वाटिका में अनछुई रहीं सीता,
कम से कम इतना तो उम्कड़ो बोध था।
भक्ति, शक्ति, ज्ञान, विज्ञान क्या था नहीं?
राज से भी अनजान वो था नहीं,
एक दम्भी चेहरा भी था रावण का,
इसीलिए भगवान वो बना नहीं।
रावण तरह-तरह से पोषित हुआ है।
कलचुरी रावण से जन-जन शोषित हुआ है।
राजनीति का, भ्रष्टाचार का या कोई और
मुझे तो लगता है रावण,
हम सभी के द्वारा ही पोषित हुआ है।

राम निवास शर्मा, लोकोपायलट बलसाह

नभ दर्शन

आशामय है नया सबेरा, तमस दूषित से भाग रहा है।
नभ की ओर खग चल पड़े,
जीवन जग में जाग रहा है।
सौंसे थपती रहती जग में, आती रहती नई पवन है।
यही सत्य है, सब असत्य है, फलों का रंता भाग रहा है।
आशामय है नया सबेरा, तमस दूषित से भाग रहा है।
बस्ती हो या निर्जन वन हो,
काल तो जग में जगता रहता।
घोर निशा हो मुक्त गगन हो
निवर्षित हो आवेशित रहता।
किन्तु जीवन कैसे जीना,
सीखा जन ने भी इस वन से।
प्रातः काल कहेंगे सारे, ब्रह्माण्ड नृत्य दिखा रहा है।
आशामय है नया सबेरा, तमस दूषित से भाग रहा है।
सिंघे के डर से क्या कुल भूगी ने
तुण को कभी भी चरना रोका?
सूक्ष्म हो या बड़ा हो प्राणी
क्या किसी ने वंश का बढ़ना रोका?
उदर पर गया प्रसन्न हो गया,
उससे ज्यादा क्या कुछ पाया?
क्यों ही हम सब भय से जीते, वन में जीवन नाच रहा है।
आशामय है नया सबेरा, तमस दूषित से भाग रहा है।

महेन्द्र प्रसाद शर्मा, लोकोपायलट, कबीरा

आजादी

जिस वृं ही समझते हो, नहीं वो वृं ही पाई है।
न जाने कितने शहीदों ने, यहाँ आहुति चढ़ाई है।।
छलकता था जोश, जिनमें वो क्रांति यही से आई है।
जिसे पाना था नामुमकिन, हकीकत में न पाई है।।
रहमत का सिमटता पैमाना, वसुधा भी अब गुस्साई है।
दिलों में दिल नहीं मिलते, फितरत की पट्टी खड़ाई है।।
तड़पता मजहब कर्तूतों पर, इसा जख्मों से राई है।
भय से आक्रांत हर शाख है,
दहशत की क्यारियाँ बनाई है।
सने में क्यों भोंकते हैं खंजर,
प्यार बाँटने को आत्मा बनाई है।
दिल की वादियों में फूल खिल उठे,
काफिरों ने सदाचारी बनने की कसम खाई है।

डी. के. अग्निहोत्री 'केलारा',
लोकोपायलट, बलसाह

बाकल

कभी चांद ने और सितारों ने देखा
हमें इस ज़मीन पर हज़ारों ने देखा
मोहब्बत की राहों पे चलते रहे हम
गुज़रते हुए इन बहारों ने देखा
हर इक राह में नक्शों-पा है हमारा
जिसे मंदिरों ने, मज़ारों ने देखा
हर इक मोड़ से हम चले अपनी धुन में
अबक बेखुदी में शरारों ने देखा
हुआ सर-कलम जब तो बेखौफ थे हम
लहू रंग सारी कटारों ने देखा
वो जिस वक़्त अरमर्ग की डोली उठी थी
उसे 'अब्स' जाते कहाँरों ने देखा
शिवदत्त 'अब्स',
सेवा निवृत्त उप मुख्य कार्मिक अधिकारी, वर्गद

नूतन वर्षाभिन्नन्दन

फिर द्वार पर दस्तक दी है एक नए साल ने,
ग्यारह हुआ अलविदा, बारह को दुलराया काल ने।
कैलेण्डर की घुरी पर धूपे, दिन, सप्ताह और मास,
बीते क्षण को यादें है और आने वाले की आस।
लफ्फों और सदियों के संगम को ये बेला है
सुनियों के झुरमुट में खुशियों और ग़म का मेला है।
औंखें रोईं, पलकें भीगी, चेहरा हुआ उदास,
संगी-साथी हुए जुदा, दिल में रह गई फांस।
मिजाज़ बल्ला मौसम ने, खुशियों की दीवाली आई,
आशाओं के दीप जले, जीवन में खुशहाली छाई।
खट्टी-मोटी यादों के संग गुज़रा पूरा साल
उपलब्धियों पर गर्वित मन, नाकामी का है मलाल।

डॉ. देवेन्द्र जोशी, प्रधान सम्पादक, दैनिक साप्ताहिक, उज्जैन

दूर होता आस पास

उसे जानता हूँ बरसों से, पर पूरा नाम नहीं मालूम
उसे भी मेरा पूरा नाम नहीं मालूम
बस शर्माजी कहता है, मुझे वह।
रोज सुबह शाम, दुआ सलाप ज़रूर होती है उससे
न होने नौसे, और कंजूस मुस्कान बिखरेते हैं,
हम दोनों एक दुजे को देखकर।
उसके बच्चे को लिटिल बॉय कहता हूँ मैं।
ये तो मालूम है कि सन्-पैतालीस में हिराशिमा पर
गिराये गये पहले परमाणु बम
का कोड नेम था 'लिटिल बॉय'
पर इस लिटिल बॉय का, पूरा नाम नहीं मालूम
ये भी नहीं पता कि यह व्यक्ति कोई नौकरी करता है,
या कोई व्यवसाय, फिर उसका मेरा क्या रिश्ता है?
वह मेरा पड़ोसी है, कई वर्षों से 'नेक्स्ट डोर नेबर'!
संतोष सुपेकर, लोकोपायलट, परियम रेलवे, उज्जैन

शिकवा

फूलों से नहीं, कलियों से से नहीं,
बल्कि काँटी से ही मैं प्यार किया।
तेरी नफ़रत को नफ़रत समझा ही नहीं,
बल्कि उसे भी मैंने स्वीकार किया।
मेरी ज़िंदगी में, काँटी ही काँटी सही,
मगर मैंने तुझे, प्यार ही प्यार दिया।
तेरी नज़रों में, मैं बुरा ही सही,
पर मैंने तुझे प्यार में, एकाधिकार दिया।
फिर भी तूने मुझे, अपना समझा ही नहीं,
तूने मुझे वृं ही, धिक्कार दिया।
मुझे तुमसे कोई, गिला-शिकवा नहीं,
कि तूने मुझे क्यों दर-किनार किया?
मुझे तो सिरफ़, तुमसे 'शिकवा' है यही,
कि मेरे ग़म का, दूसरों से क्यों इज़हार किया?

रजनीश प्रजापति, वरिष्ठ सहायक लोकोपायलट, बामी

लोग कहते हैं तुम पत्थर हो,
मैं कहता हूँ, हाँ मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
अगर मैं पत्थर हूँ, तो लोग मुझे
पूजते क्यों हैं?
अगर मैं पत्थर हूँ,
तो लोग मुझे ओढ़ते क्यों हैं?
और अगर मैं पत्थर हूँ,
तो लोग अपने आशियाने
मुझसे क्यों बनाते हैं?
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो,
मैं कहता हूँ, हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
यदि मैं पत्थर हूँ,
तो नारियाँ अपने आभूषणों में,
मेरा प्रयोग क्यों करती हैं?
यदि मैं पत्थर हूँ तो,
आप अपने भविष्य के लिए,
मुझे क्यों पहनते हैं?
विश्व का सबसे कीमती हौरा
'कोहिनूर' भी तो एक पत्थर है।
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
कभी मैंने किले बनकर,
तुम्हारी हिफाजत की है।
आज भी हिमालय बनकर,
तुम्हारी सहायता करता हूँ।
मौसम की तासीर झेलता हूँ,
और तुम्हें सुकून देता हूँ।
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,

हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
तुम्हारे मरने के बाद,
मुझसे तुम्हारे आदमक की
प्रतिमाएँ बनाई जाती हैं।
मैं तुम्हें इतिहास में
संजो कर रखता हूँ।
क्यों जाने बाद भी
एलोरा और खजुराहो?
वहाँ पर भी तो सिर्फ पत्थर हैं।
आप उन पत्थरों को मत देखिये,
उन पत्थरों में छुपी हुई
भावनाओं को देखिये।
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
पुनः पत्थर आदमी से कह रहा
तुम्हारे नाम से क्या है इतिहास में
मेरे नाम से तो एक युग है,
जिसे 'पाषाण युग' कहते हैं।
मैं अंगिका का अन्धेक हूँ
और विश्व का पहला
हथियार हूँ और रूँगा।
आजकल भी जब
कुत्ता भौकता है,
तो सबसे पहले क्या करते हैं,
पत्थर नहीं भी होता है,
तो भी उठाने का
अभिनय करते हैं
और कुत्ता भाग जाता है।
वैसे तो कभी प्रलय
या विश्वव्यापी न हो,
परंतु यदि हुआ तो
सृष्टि का अन्त होगा
और पुनः जब

पत्थर

संसार शुरू होगा,
पुनः लोग ईंट
पत्थरों से ही लड़ेंगे।
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
विश्व में जब कभी भी
रेलगाड़ी चलाने की
बात आई होगी,
तो पहले कुछ पत्थर
बिछाये गये होंगे।
उनके ऊपर पटरियाँ,
और उसके ऊपर रेलगाड़ी
आपको मालूम है कि
पत्थर पटरी के नीचे
क्या काम करते हैं?
ये शाब्दिक यद् देश
काम करते हैं।
आज रेलवे को चले
150 पत्थर से अधिक हो गये हैं,
फिर भी इन पत्थरों का
कोई दूसरा पर्याय नहीं है।
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
हम चाहें तो नदियों के
रुख बदल सकते हैं,
और तुम ये भी अच्छी
तहस से जानते हो कि

जब कभी भी नदियों के
किनारे कटने को होते हैं,
तुम हमें लगा देते हो,
जब कभी भी कोई
अन्दोलन होता है,
लोग हमें फेंक कर मारते हैं।
जब कोई पूछता है?
कि चोट कैसे लगी?
तो कहते हो पत्थर से लगी
मानने वाले का
नाम भी नहीं बताते।
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
इस देश की माँओं की ममता
विश्व प्रसिद्ध है।
काश इस देश की माताओं ने
अपनी छाती पर पत्थर रखकर
अपने बेटों को
युद्ध में न भेजा होता
तो शाब्दिक यद् देश
फिर गुलाम हो गया होता
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
तुमने हमसे कुछ नहीं सीखा,
हमने तुम्हें सीमाओं
में बाँट दिया है,
परन्तु हम जब भी रहे हैं
शृंखलाओं में रहे हैं,
चाहे वो अरबली पर्वत की
शृंखला हो
या सहायरी पर्वत की।

और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
मैं नीव का पत्थर हूँ,
खिला का पत्थर हूँ,
याद रखना तुम जिंदगी में
किसी मुकाम पर भी पहुँच जाना
याद रखना तुम्हारी सफलता की
पहली सीढ़ी का पत्थर मैं हो था
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।
तुम बड़े पतलवी हो,
कभी कहते हो
तुम्हारा दिल पत्थर
का हो गया है
तुम पत्थर हो गये हो
और कभी कहते हो
कि चट्टान से अडिग रहो
या दृढ़ रहो
यदि मैं कठोर हूँ, संवेदनहीन हूँ
तो मुझे क्यों लाये हो
अपने जीवन में?
प्रतिपल प्रतिक्षण में
मुझे मालूम है,
मेरे बिना तुम्हारा
कोई अस्तित्व नहीं है
और इसके बाद भी
कहते हो कि
तुम पत्थर हो, मैं कहता हूँ,
हाँ, मैं पत्थर हूँ,
पर ईंसानों से कहीं बेहतर हूँ।

डा. वाई. के. सिंह

जनसमर्पक अधिकारी मध्य रेल, पुणे

परिंदों को शिकायत है कभी तो सुन मेरे मालिक
तेरे दानों में भी शायद लगा है घुन मेरे मालिक
किसी बच्चे से मेले में न छूटे बाप की उंगली
कभी मैं बँन के भी तू इस दुआ को सुन मेरे मालिक
तुझे क्या पड़ी थी जो बना ली बेहम दुनिया
आगर पछता रहा है तू तो सर को बुन मेरे मालिक
किसी का सर खुला है, तो किसी के पाँव बाहर है
ज़रा ढंग से तू अपनी चादरो को बुन मेरे मालिक
तुझे भी देख लेता था गुणी इतना था 'वह अंबा'

बरे चित ना कभी उसने तेरे अवगुन मेरे मालिक
छिड़के तेज़ाब पलकों पर जगाया रात भर तुने
किसी माँ से घुल ले लोरियों की घुन मेरे मालिक।

दो मॉडर्न बाज़ूज़ें

सँडक ने जब मेरे पैरों की उंगलियाँ देखाँ
कड़कती धूप में सोने पे बिजलियाँ देखाँ
वो पहली बार अपनी उग्र से हुआ वाकिफ़
शहर में जब किसी बच्चे ने तितलियाँ देखाँ

लगा कुरआन के पन्नों ने आयते देखों
हमारी भूख ने जब-जब भी पसलियाँ देखाँ
जवान बेटियों की मौत पर वो बेबस है
तड़पती रेत में सागर ने मछलियाँ देखाँ
भरे बुखार में माथे पे भीगती पट्टी
कुछ इस तरह से किसानों ने बदलियाँ देखाँ
वो ले के आये थे झोली में अमन के दाने
कबूतरो ने मगर उसमें सुतलियाँ देखाँ

फैलासा सेंगर, वॉफ कवि एवं साहित्यकार, मुंबई